Conclusion

उपसंहार

उपसंहार

14 सितम्बर 1949 को जब संविधान सभा में राजभाषा सम्बन्धी भाग स्वीकृत हुआ और हिन्दी को राजभाषा के रूप में अंगीकार करने का निर्णय लिया गया तो संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने कहा था - 'आज पहली बार हम अपने संविधान में एक भाषा स्वीकार कर रहे हैं जो भारत संघ के प्रशासन की भाषा होगी और जिसे समय के अनुसार अपने-आपको ढालना और विकसित करना होगा। हमने अपने देश का राजनीतिक एकीकरण सम्पन्न किया है। राजभाषा हिन्दी देश की एकता को कश्मीर से कन्याकुमारी तक अधिक सुदृढ बना सकेगी। अंग्रेजी की जगह भारतीय भाषा को स्थापित करने से हम निश्चय ही और भी एक दूसरे के निकट आएंगे।' आजादी से पहले भी पूरे भारत देश को एकता के सूत्र में बाँधने के लिए एक अखिल भारतीय भाषा की अवधारणा आवश्यक मानी जाती रही। इसके पीछे मुख्य कारण था विदेशी (ब्रिटिश) साम्राज्य द्वारा भारतीयों पर अंग्रेजी थोपने की कूटनीति। हालांकि भारत में अंग्रेजों के शासन से पहले छः सौ वर्षों तक मुस्लिम शासन रहा था, फिर भी राष्ट्रभाषा (हिन्दी) और राजभाषा (फारसी) में कभी कोई विरोध वैमनस्य या संघर्ष की स्थिति पैदा नहीं हुई। उस काल में भी आम जनता के विचार-व्यवहार और संपर्क संचार की भाषा हिन्दी ही रही। मुस्लिम शासक वर्ग ने देश की आम जनता से

सम्पर्क बनाए रखने के लिए जनता की भाषा को माध्यम बनाया। जिस समय अंग्रेज़ों का राज आया, उस समय तक हिन्दी व्यावहारिक रूप से राष्ट्रभाषा बन चुकी थी। जब एक विदेशी भाषा (अंग्रेजी) को बलपूर्वक और छलपूर्वक प्रतिष्ठित करके देशवासियों को दासता के जाल में जकड़ने का प्रयास किया गया तो जागरूक मनीषियों का चौकन्ना होना स्वाभाविक था। राष्ट्रनेताओं के प्रयास से हिन्दी भारत की राष्ट्रीय अस्मिता की प्रतीक बन गई। 30 मार्च 1826 को कलकत्ता से शुरु होने वाले हिन्दी के सबसे पहले पत्र 'उदंत मार्तण्ड' के प्रकाशक का उद्देश्य ही यही था कि लोगों को पराई भाषा (अंग्रेजी) से विरत करके अपनी भाषा (हिन्दी) की ओर उन्मुख किया जाए। अंग्रेजी को परायी भाषा मानकर निज भाषा हिन्दुस्तानी (सरल खड़ी बोली हिन्दी) में समाचार पत्र निकालने की यह तड़प वास्तव में राष्ट्रीय चेतना के संदर्भ में राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी के महत्व को स्वीकार करने की शुरुआत थी। बंगाल के वरिष्ठ पत्रकार केशवचन्द्र सेन ने अपने समाचार पत्र में सन् 1857 में लिखा- 'हिन्दी ही अखिल भारत की जातीय भाषा या राष्ट्रभाषा बनाने के योग्य है।' 1857 में ही भारत का प्रथम स्वाधीनता संग्राम लड़ा गया। इसमें हिन्दी ही माध्यम थी। सभी क्रांति समाचार, संवाद और संदेश हिन्दी में प्रसारित किए गए थे। उस प्रथम स्वाधीनता संग्राम का मुखपत्र था - 'पयाम-ए-आजादी' और यह दिल्ली से देवनागरी (हिन्दी) और फारसी (उर्दू) दोनों में निकलता था। सन् 1873 में निजभाषा अर्थात् राष्ट्र की जनता की भाषा को 'स्वदेशीपन' के साथ जोड़ते हुए आधुनिक युग के प्रवर्तक भारतेन्दु हरिशचन्द्र ने यह उद्घोष किया था -

'निजभाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा ज्ञान कै, मिटै न हिय को सूल॥
प्रचलित करहु जहान मैं, निज भाषा करि जन
राजकाज दरबार में, फैलावहु यह रत्न।'

इसी वर्ष गुजरात के प्रसिद्ध दार्शनिक, विचारक, समाजसुधारक महर्षि दयानन्द

सरस्वती ने 'आर्य समाज' की और प्रत्येक आर्यसमाजी को हिन्दी पढ़ना अनिवार्य किया जिसके फलस्वरूप धार्मिक एवम् सामाजिक स्तर पर हिन्दी को समूचे राष्ट्र की जनभाषा बनने में बहुत सहायता मिली। प्रसिद्ध बंगला कथाकार बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय ने 1904 में कलकत्ता के प्रमुख हिन्दी पत्र 'भारत मित्र' में लेख छापा जिसमें उन्होंन कहा था - 'अंग्रेजी भाषा में चाहे जो हो लेकिन हिन्दी सीखे बिना नहीं चल सकता। हिन्दी भाषा में किताब और भाषण से भारत के अधिकांश का मंगल होगा ....' सन् 1909 में गुजरात के बड़ौदा नरेश महाराजा सयाजीराव, बंगाल के रमेशचन्द्र दत्त तथा महाराष्ट्र के डॉ. रामकृष्ण गोपाल भंडारकार ने मिलकर बड़ौदा में एक महत्वपूर्ण आयोजन कर हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में मान्य कराने का संकल्प लिया।

इस प्रकार हिन्दी क्षेत्र से बाहर के प्रदेशों के अधिकांश विद्वान और विचारक भी राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी की प्रतिष्ठा में जुटे हुए थे। सन् 1916-17 में महात्मा गाँधी जब कलकत्ता के कांग्रेस अधिवेशन में पहली बार एक राष्ट्रीय नेता के रूप में उभरे तभी से उन्होंने एक राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी को प्रतिष्ठित करना अपने समूचे स्वदेशी आन्दोलन तथा राष्ट्रीय कार्यक्रम का अभिन्न अंग बना लिया। 1916 में उन्होंने अधिवेशन का सारा कार्य हिन्दी में चलाने की शुरुआत की। दिसम्बर 1916 में लखनऊ में गाँधी जी के निर्देश पर हिन्दी को राष्ट्रीय दर्जा देने सम्बन्धी जो प्रस्ताव पास हुआ उसके समर्थकों में श्री रामस्वामी अय्यर और श्री रंगस्वामी आयंगर जैसे दक्षिण भारतीय प्रतिनिधि अग्रणी थे।

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट हो जाता है कि स्वाधीनता आन्दोलन के दौरान हिन्दी का राष्ट्रभाषा के रूप में बड़ी तेजी से विकास हुआ। स्वाधीनता आन्दोलन का प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से समर्थन करने वाले असंख्य नेताओं, क्रांतिकारियों, लेखकों, कवियों, पत्रकारों आदि ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने में यथासम्भव योगदान

दिया।[1] इस प्रकार सन 1947 तक हिन्दी राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित होने के साथ-साथ राजभाषा का दर्जा प्राप्त करने में सक्षम हो चुका थी। स्वतंत्रता प्राप्ति तक 'राष्ट्रभाषा' और 'राजभाषा' का अभिप्राय एक ही था। बाद में संविधान सभा में इस पर विधिवत् विचार-विमर्श हुआ तो मान लिया गया कि राष्ट्रभाषा के रूप में तो हिन्दी पहले ही प्रतिष्ठित है अब इसे वैधानिक रूप से राजभाषा का भी दर्जा दिया जाना चाहिए। इस प्रकार हिन्दी स्वतंत्र भारत की राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित हुई।

हिन्दी को संघ की राजभाषा का दर्जा देने के बाद संघ सरकार पर इस बात का उत्तरदायित्व डाला गया कि वह इसके क्रियान्वयन का क्रमबद्ध विकास करे। तदनुसार, संघ सरकार के विभिन्न नियम-अधिनियम 1963, राजभाषा संकल्प 1968, राजभाषा नियम 1976 आदि का उल्लेख पिछले पृष्ठों में किया जा चुका है। इन सब प्रावधानों के आधार पर सरकारी कर्मचारियों से अपेक्षा की गई कि वे अपना कामकाज शीघ्रातिशीघ्र पूरी तरह से हिन्दी में करने लगेंगे। 1975 में गृह मंत्रालय के अधीन राजभाषा विभाग गठित होने के बाद से इस दिशा में समन्वित प्रयास किए जा रहे हैं। सरकारी प्रयासों के अलावा अर्धसरकारी और निजी संस्थाओं द्वारा भी इस दिशा में काफी कार्य हुआ है। इनका उल्लेख भी गत पृष्ठों में किया जा चुका है। एकीकृत प्रयासों के फलस्वरूप हिन्दी का विस्तार साहित्य से इतर क्षेत्रों में भी काफी तेजी से हुआ है। आज देश के 90 प्रतिशत से भी अधिक लोग जिस भाषा में विचार विनिमय कर पा रहे हैं, वह हिन्दी ही है। तीर्थाटन, व्यापार, वाणिज्य, भ्रमण ये सभी हिन्दी माध्यम से ही सम्पन्न हो रहे हैं। बंगाल की जूट मिलें हों, असम के चाय-बगान हों, आप चाहें अहमदाबाद में हों, मुम्बई में हों, मदुरई में हों या मैसूर में सभी जगह हिन्दी के माध्यम से आपका काम चल सकता है। हिन्दी भाषी क्षेत्रों के मजदूर प्रायः सर्वत्र फैले हुए हैं और उनके साथ उनकी भाषा भी। अतः कोई हिन्दीतर भाषाभाषी अधिकारी जब मजदूरों से बातें करता है तो वह हिन्दी की ही शरण लेता है। वैज्ञानिक व तकनीकी

1. प्रशासनिक एवम् कार्यालयी हिन्दी - डॉ. रामप्रकाश/डॉ. दिनेश कुमार गुप्त
राधाकृष्ण प्रकाशन पृ. 102-103

क्षेत्र में हिन्दी के प्रयोग में सबसे बड़ी कठिनाई पारिभाषिक शब्दावली के न होने की थी किन्तु अब यह कठिनाई भी दूर कर ली गई है जिनकी मदद से इन क्षेत्रों में भी हिन्दी का प्रयोग काफी बढ़ा है। इन क्षेत्रों में हिन्दी के प्रयोग की स्थिति को पिछले अध्यायों में विस्तार से बताया गया है।

यदि हिन्दी के विकास में कहीं बाधा है तो वह साधनों की नहीं बल्कि हमारी अपनी मानसिकता ही इसमें सबसे बड़ी बाधा बनी हुई है। हमने अंग्रेजी का अध्ययन करने में जो असाधारण रुचि व उत्साह का परिचय दिया है, अपनी भाषा के प्रति उतनी ही उदासीनता दिखाई है। संसार में कोई विरला देश होगा जहाँ के निवासी अपनी भाषा बोलने में संकोच का अनुभव करते हों। हमारा देश इसका अनोखा उदाहरण है। इस अपनी भाषा बोलने की अपेक्षा अंग्रेजी बोलने में अधिक आनंद और गर्व का अनुभव करते हैं जो वस्तुतः खेद और ग्लानी का विषय है। हमें अपनी कमजोरी को दूर करने का प्रयास करना होगा तभी हमारी जीभ और कान भारतीय शब्दों के आदि हो सकेंगे। व्यवहार ही भाषा को प्रचलित बनाती है। हम जितना उसका व्यवहार करेंगे, उतनी ही वह सुगम होगी। हमें यह ध्यान रखना होगा कि शब्द व्यवहार में आने से ही प्रचलित और स्वीकृत होते हैं। प्रयोग से ही वे प्राणवान् बनते हैं अन्यथा कोशों व शब्दावलियों में वे निष्प्राण पड़े रहते हैं। गत 40-50 वर्षों में लाखों पारिभाषिक शब्दों का निर्माण हुआ है। ये सभी शब्द रातों-रात प्रचलित हो जाएं, यह सम्भव नहीं है। कोशाकार का काम है शब्दों को प्रस्तुत कर देना, ग्रहण करना समाज के हाथ में है। उन शब्दों की स्वीकार्यता या अस्वीकार्यता पर अन्तिम मुहर समाज को लगानी होती है। जो शब्द समाज में प्रचलित हो जाएंगे व जीवित रहेंगे, जो नहीं चल पाएंगे वे काल के गाल में समा जाएंगे। प्रणियों के समान शब्द भी जन्म लेते और मरते हैं। 'योग्यतमावशेष' (सरवाइवल ऑफ द फिटेस्ट) सिद्धान्त उन पर भी लागू होता है। कौन से शब्द संतोषप्रद हैं कौन से नहीं इसका निर्णय प्रयोग से ही हो सकता है। कोश में सभी शब्द समान हैं। प्रयोग ही वह कसौटी है जिस पर शब्दों के गुणदोष की परीक्षा

संभव है । अतः हिन्दी के पारिभाषिक शब्दों को हमें प्रचलित बनाना है तो उनका अधिकाधिक व्यवहार करना होगा । मात्र कठिन शब्द कहकर उसके प्रयोग से बचना वांछनीय नहीं है । जब तक शब्द प्रयोग में नहीं आएगा तो वह प्रचलित कैसे हो पाएगा। हिन्दी कार्यशालाओं का उद्देश्य यही है कि हम नए शब्दों से भलीभांति परिचित हो जाएं और उनके प्रयोग से अभ्यस्त हो जाएं । भारत सरकार का यह प्रयास काफी कारगर सिद्ध हुआ है और आज हजारों प्रशासनिक शब्द जो कभी हमारे लिए अजनबी और अजीब थे, आज सुगम और सुबोध बन गए हैं ।

भाषा के व्यवहार का अर्थ है कि वह प्रशासन, न्याय, शिक्षा, विदेशी-सम्पर्क, प्रौद्योगिकी, ज्ञान, मनोरंजन, सूचना, वाणिज्य व्यवसाय आदि की भाषा बन सके । जो भाषा जितने अधिक क्षेत्रों में प्रयुक्त होती है, वह उतनी ही व्यापक मानी जाती है । हिन्दी थोड़ी या बहुत इन सभी क्षेत्रों में प्रयुक्त हो रही है, आवश्यकता इस बात की है कि यह आंशिक प्रयोग पूर्ण-प्रयोग में परिणित हो ।[1] हिन्दी के प्रचार को दो भागो में विभाजित किया जा सकता है : सरकारी और गैर सरकारी । शासन, न्याय, शिक्षा, वैदेशिक सम्पर्क आदि ऐसे क्षेत्र हैं जिनमें हिन्दी का प्रचार प्रसार सरकारी स्तर पर ही हो सकता है । हालांकि इन क्षेत्रों के लिए शब्द कोशों के निर्माण और शब्दों के प्रचलन में गैर-सरकारी प्रयास भी सार्थक सिद्ध हुए हैं । इन क्षेत्रों में हिन्दी के प्रसार में सबसे बड़ी अड़चन है, इन क्षेत्रों के सूत्र-संचालन का दायित्व जिनके हाथों में है, वे अंग्रेजी के माध्यम से ही काम करने के आदि रहे हैं । अंग्रेजी का बना-बनाया ढांचा है और उस ढांचे से वे पूर्णतः परिचित और अभ्यस्त हैं । उस ढांचे के अनुरूप चलने में उन्हें कोई कठिनाई नहीं होती । उस बने बनाए ढांचे को छोड़कर हिन्दी का ढांचा अपनाने का कार्य निश्चय ही प्रयत्न-साध्य है और वह प्रयत्न करने को अधिकांश लोग तैयार नहीं हैं । किन्तु यह प्रयास एक न एक दिन तो करना ही होगा । अंग्रेजी के साथ सम्पर्क

1. राष्ट्रभाषा हिन्दी : समस्याएं और समाधान-आचार्य देवेन्द्रनाथ शर्मा पृ. 206

जितना पुराना होता जाएगा उतना ही यह परिवर्तन कठिन होता जाएगा। यह तो निश्चित है कि अंग्रेजी का दामन हमें छोड़ना है तो जितनी जल्दी छोड़ दें उतना ही यह परिवर्तन सुगम होगा। यह कार्य केवल दृढ़ संकल्प, तत्परता और निष्ठा से ही किया जा सकता है। हमें स्वतंत्रता बड़ी कठिनाई से मिली है किन्तु भारतीय भाषाएं अभी भी परतंत्रता के जाल से मुक्त नहीं हो पाई हैं। उनकी मुक्ति के लिए भी उसी प्रकार के कठोर प्रयास की आवश्यकता है जो हमने देश की आजादी के लिए किए थे। संविधान ने संघ सरकार को अधिकार दिए हैं कि वह हिन्दी के प्रचार प्रसार के लिए सतत् प्रयास करे और भारत सरकार प्रयास कर भी रही है किन्तु उक्त प्रयास अभी भी पूर्णतः फलीभूत नहीं हो पाए हैं यद्यपि आंशिक रूप से प्रयासों को सफलता अवश्य मिली है।

हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए गैर सरकारी माध्यम भी प्रयासरत हैं। इनमें शामिल हैं-हिन्दी संस्थान, सिनेमा, समाचार पत्र, रेडियो, पत्र पत्रिकाएं, पुस्तक, वाणिज्य, व्यवसाय, इलेक्ट्रोनिक माध्यम आदि। इन सबमें हिन्दी संस्थानों का महत्व व उत्तर दायित्व सबसे अधिक है। नागरी प्रचारिणी सभा, बंगीय हिन्दी परिषद्, हिन्दी अकादमी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् आदि ऐसी ही कुछ संस्थाएं हैं जो हिन्दी के प्रचार के उद्देश्य से अस्तित्व में आईं किन्तु इन संस्थानों द्वारा उतना और वैसा कार्य नहीं हो पाया है जितना और जैसा उनसे उपेक्षित था। हालांकि हिन्दी के प्रचार के लिए जितना उत्तर दायित्व संघ सरकार का बनता है उससे कहीं अधिक इन संस्थाओं का बनता है।

हिन्दी के प्रचार प्रसार में यदि किसी माध्यम का योगदान सबसे अधिक माना जा सकता है तो वह है सिनेमा। हिन्दी फिल्में अखिल भारतीय स्तर पर चलती हैं। बंगाल में बंगला से अधिक हिन्दी सिनेमा की मांग है। उसी प्रकार तमिल, तेलुगू, कन्नड़ या मलयालम बोलने वाले भी बड़े चाव से हिन्दी फिल्में देखते हैं। हिन्दी फिल्में बनाने वाली सभी बड़ी कम्पनियाँ अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में अवस्थित हैं। पिछले पृष्ठों में

हमने हिन्दी सिनेमा पर विहंगम दृष्टि डाली और हम यह निश्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि सिनेमा ने हिन्दी के प्रचार प्रसार में जितना बड़ा काम किया है, उतना कोई एक माध्यम नहीं कर पाया है। हालांकि इलेक्ट्रोनिकी माध्यम में टी.वी. यह कार्य बखूबी कर रहा है। उसके बाद स्थान आता है समाचार पत्रों का। हिन्दी के समाचार पत्र हिन्दी क्षेत्रों में तो प्रकाशित होते ही हैं, कलकत्ता और बम्बई जैसे महानगरों में भी प्रकाशित होते हैं और उनकी खपत सार्वदेशिक है। समाचार पत्रों की आवश्यकता प्रतिदिन की है। पत्रिकाएं रोजाना नहीं छपती, पुस्तकें भी रोज नहीं निकलती। दूसरे उनकी सुलभता भी जन-साधारण में उतनी नहीं जबकि समाचार पत्रों का दैनिक रूप और उनमें प्रकाशित समाचारों की सर्वजन-सुलभता उन्हें वह व्यापकता प्रदान करती है जो अन्यत्र दुर्लभ है। भारतीय भाषाओं में हिन्दी के समाचार पत्रों की संख्या सर्वाधिक होना हिन्दी की ग्राह्यता का विस्तार दर्शाता है। जहाँ तक हिन्दी पत्रिकाओं की स्थिति का प्रश्न है, उसकी स्थिति उतनी संतोषप्रद नहीं कही जा सकती। किन्तु जैसा कि हमने गृह पत्रिका से सम्बन्धित अध्याय में देखा, गृहपत्रिकाओं की बढ़ती संख्या इस बात की प्रमाण है कि औद्योगिक, सरकारी, बैंकिंग और सार्वजनिक क्षेत्र में गृहपत्रिकाएं हिन्दी के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दे रही हैं। एक ओर जहाँ हिन्दी की प्रतिष्ठित सामाजिक, साहित्यिक पत्रिकाओं को बन्द होने की स्थिति से गुजरना पड़ा है जैसे धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, माधुरी आदि तो दूसरी ओर सरिता, मनोरमा, गृहशोभा, सहेली, जैसी पारिवारिक पत्रिकाओं और चंपक, चंदामामा, बालहंस जैसी बाल पत्रिकाओं की संख्या में निरंतर वृद्धि हुई है। प्रसिद्ध समाचार पत्रों की भी साप्ताहिक पत्रिकाएं काफी लोकप्रिय हुई है। पुस्तको के प्रकाशन की दृष्टि से भी हिन्दी को लाभ ही हुआ है। एकसे एक अच्छी पुस्तकें तेजी से प्रकाशित हो रही हैं। अन्य भाषाओं की श्रेष्ठ कृतियों का भी हिन्दी में काफी अनुवाद हुआ है और काफी मात्रा में अनुवाद जारी है। जहाँ तक उपयोगी व तकनीकी साहित्य के प्रकाशन का सवाल है इस ओर अधिक ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। हालांकि इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, भौतिक

शास्त्र, रसायन शास्त्र आदि की पुस्तकें निकली हैं किन्तु यह स्थिति अधिक सुदृढ़ होती यदि शिक्षा का माध्यम हिन्दी बन गई होती। चूंकि माध्यम का प्रश्न अभी भी अनिर्णित है इसलिए प्रकाशक पूरे मनोयोग से इस दिशा की ओर उन्मुख नहीं हो पा रहे हैं। हिन्दी के प्रचार प्रसार में 'पॉकेट-बुक्स' का प्रकाशन काफी उत्साहवर्द्धक रहा है। कम कीमत में अच्छी-अच्छी पुस्तकें इन जेबी पुस्तकों के माध्यम से प्राप्य होने से विश्व-स्तर की पुस्तकों तक आम आदमी की पहुँच बढ़ी है। कम दाम में अच्छा साहित्य देना केवल साहित्य का ही प्रचार करना नहीं बल्कि उस भाषा का भी प्रचार करना है। इस दृष्टि से 'हिन्द पॉकेट बुक्स', 'दिल्ली पॉकेट बुक्स' जैसे प्रकाशकों का हिन्दी-प्रसार में काफी योगदान रहा है। आज भाषा और ज्ञान के तमाम अनुशासनों का साहित्य हिन्दी में उपलब्ध है। हर प्रकार के ज्ञान और सूचना को अभिव्यक्ति देने में अपने सामर्थ्य का अहसास हिन्दी करा चुकी है।

हिन्दी के प्रचार प्रसार में रेडियो (आकाशवाणी) की भूमिका को कम आंका नहीं जा सकता। पिछले पचास वर्षों से जब टी.वी., टेपरिकार्डर आदि की सुविधा उपलब्ध नहीं थी, लगभग पूरा देश आकाशवाणी के समाचारों पर आश्रित था। विविधभारती द्वारा प्रसारित हिन्दी गाने हमारे दिनभर के मनोरंजन के एकमात्र स्त्रोत थे। रात को प्रसारित हिन्दी हास्य नाटिका कार्यक्रम 'हवा महल', रेडियो सिलोन द्वारा प्रसारित 'बिनाका गीत माला', 'भूले बिसरे गीत' जैसे कार्यक्रमों ने हिन्दी का प्रसार हमारे शयन कक्षों तक किया। समाचार पत्रों, पत्रिकाओं या पुस्तकों की तुलना में रेडियों में यह विशेषता है कि वह जीवित भाषा को सामने लाता है। जीवित भाषा यानि उच्चारित भाषा अर्थात भाषा जिस रूप में बोली जाती है, उसे रेडियों उसी रूप में प्रस्तुत करता है। इस प्रकार उससे भाषा सम्बन्धी संस्कार और अभ्यास निर्माण में जो सहायता मिलती है, वह मुद्रित साधनों से नहीं मिल सकती। यही कारण है कि आकाशवाणी, रेडियो सिलोन, बी.बी.सी. रेडियो आदि से प्रसारित हिन्दी कार्यक्रमोंका का हिन्दी के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

आज के युग में जब टेलीविजन 'इडियट बॉक्स' के रूप में हमारे ड्राइंग कक्षों पर अपना अधिपत्य जमा चुका है, उसकी ताकत और क्षमता से सभी भली-भाँति परिचित हो चुके हैं। हिन्दी के प्रचार प्रसार में टी.वी. का योगदान सबसे अधिक महत्वपूर्ण हो चुका है। पहले दूरदर्शन और अब अन्तरराष्ट्रीय चैनलों ने हिन्दी की क्षमता को पहचाना है और फलस्वरूप आज असंख्य हिन्दी धारावाहिक विभिन्न चैनलों पर उपलब्ध हैं। 'स्टार प्लस' 'सोनी' जैसे सशक्त अंग्रेजीदां अंतरराष्ट्रीय चैनल भी अब हिन्दी के कार्यक्रम बनाने की होड़ में लगे हैं। विदेशी प्रचार माध्यमों ने इस सार को पूरी तरह से समझ लिया है कि उन्हें इस देश की करोड़ों जनता के दिल तक पहुँचना है जो 'जनभाषा' का सहारा उन्हें लेना ही पड़ेगा। फलस्वरूप लगभग सभी विदेशी चैनल अपने नियमित कार्यक्रमों को बदलकर हिन्दी कार्यक्रम तैयार करा रहे हैं। उन्हें यह सच्चाई भी समझ में आ गईहै कि भारत में भारतीय संगीत ही लोकप्रिय हो सकता है यही कारण है कि एम.टी.वी., वी. चैनल और म्यूजिक एशिया' जैसे संगीत चैनलों ने भारतीय संगीत को प्रमुखता देना शुरु कर दिया है। इन चैनलों पर हिन्दी फिल्मों के गीत, हिन्दी पॉप और हिन्दी एलबम के गीत छाए रहते हैं। 'डिस्कवरी चैनल' ने भी हिन्दी में कार्यक्रम प्रस्तुत करना शुरु कर दिया है जो थोड़े समय में काफी लोकप्रियता को प्राप्त कर चुका है। टी.वी. पर प्रसारित बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के विज्ञापन भी आज हिन्दी में ही दिखाई देने लगे हैं. जनभाषा के रूप में हिन्दी की व्यापकता को देखकर ही बहुराष्ट्रीय कम्पनियां अपने उत्पादों का विज्ञापन हिन्दी में दे रही हैं। इनमें 'कोकाकोला' और 'पैप्सी' के विज्ञापनों में तो आपसी प्रतियोगिता की काट-दौड़ लगी रहती है। क्योंकि वे और उन जैसी सैंकड़ों बहुराष्ट्रीय कम्पनियां इस सत्य को जान चुकी हैं कि बाजार का बहुसंख्यक हिस्सा अंग्रेजी नहीं, हिन्दी समझता है।

जिस प्रकार वाणिज्य और व्यवसाय के विस्तार में जनभाषा का योगदान महत्वपूर्ण रहता है, उसी प्रकार भाषा के प्रचार में भी वाणिज्य और व्यवसाय का बहुत बड़ा हाथ रहता है। हर आदमी ज्यादा से ज्यादा पैसा कमाना चाहता है और उसका

सर्वोत्तम साधन है व्यापार। व्यापार किसी सीमित क्षेत्र में तो हो नहीं सकता। क्षेत्र जितना व्यापक होगा, व्यापार उतना ही लाभकर होगा। भारत में हिन्दी के अतिरिक्त और कोई भाषा नहीं है जो अन्तःप्रान्तीय स्तर पर उद्योग-व्यवसाय को चलाने में सहायता कर सकती हो। हम यह देख चुके हैं कि बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को भी यह बात समझ में आ चुकी है और उन्होंने अपने उत्पाद के विक्रय के लिएहिन्दी का आश्रय लिया है। अंग्रेजी में विज्ञापन से कार बेची जा सकती है, सेल्युलर फोन बेचा जा सकता है लेकिन साबुन, तेल, नमक, चायपत्ती और कपड़ा बेचने के लिए तो भारतीय भाषाओं का ही सहारा लेना होगा, यह बात उद्योगपति और व्यापारी वर्ग अच्छी तरह जानता है। टी.वी. के कारण उपभोक्तावाद में बढ़ोतरी हुई है लेकिन हिन्दी की ताकत भी बढ़ी है। हिन्दी में विज्ञापन, विपणन आदि क्षेत्र में मौलिक काम करने वालों की माँग बढ़ी है।

व्यावसायिक, धार्मिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक कारणों से एक प्रदेश के लोग दूसरे प्रदेशों में बड़ी संख्या में आते जाते रहे हैं। ये प्रवासी एक अलग ढंग की हिन्दी का विकास कर रहे हैं, क्योंकि संवाद और संपर्क के लिए हिन्दी की महत्ता को स्वीकार किया जाने लगा है। उदारहण स्वरूप नौकरी की तलाश में हिन्दी प्रदेशों से अहिन्दी प्रदेशों में जाने वाले लोग अपने साथ अपनी भाषा, संस्कृति, परिवेश सब ले गए और फलस्वरूप कलकत्ता में कलकतिया हिन्दी और बम्बई में बम्बइया हिन्दी विकसित हुई। इसी प्रकार सैनिकों और साधुओं से भी हिन्दी प्रचार में सहायता मिलती रही है। वे जहाँ भी गए हैं और रहे हैं, वहाँ उनके साथ हिन्दी भी गई है। पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार के साधु अहिन्दी क्षेत्रों में भी घूमते हैं और उनके साथ हिन्दी भी महाराष्ट्र, गुजरात, बंगाल, उड़ीसा, असम आदि प्रदेशों में गई है। तीर्थों में तो सारे काम ही हिन्दी माध्यम से होते है और तीर्थाटन के लिए तो सम्पूर्ण भारत में एक कोने से दूसरे कोने तक श्रद्धालुओं का आना जाना बना रहता है। फलस्वरूप हिन्दी भी उनके साथ प्रवाहित होती रहती है।

न्याय की भाषा के रूप में हिन्दी का विकास अपेक्षाकृत कम हुआ है क्योंकि प्राचीन काल में संस्कृत न्याय की भाषा थी और उसके बाद फारसी और अंग्रेजी न्याय की भाषा बनी। किन्तु राजभाषा पद पर प्रतिष्ठित होने के बाद हिन्दी को विधि क्षेत्र में प्रयोग में लाने के प्रयास निरंतर जारी हैं। सरकारी और गैर सरकारी संस्थाओं के प्रयासों के फलस्वरूप हिन्दी भाषी प्रदेशों के उच्चन्यायालयों तक की भाषा हिन्दी करीब-करीब बन चुकी है। केन्द्र सरकार के विधि, न्याय और कम्पनी कार्य मंत्रालय के विधायी विभाग के दो एकक - राजभाषा खण्ड और विधि साहित्य प्रकाशन - विधि क्षेत्र में हिन्दी के प्रयोग और उसके उत्तरोत्तर विकास में लगे हुए हैं।[1] सर्वप्रथम 8 अक्टूबर 1947 को उत्तर प्रदेश विधान परिषद् की भाषा के रूप में हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि को स्वीकार किया गया था। अलवर, इन्दौर, इलाहबाद, जबलपुर कोटा आदि में स्थित न्यायालयों में भी हिन्दी में कार्य करने की पहल की गई किन्तु मानक विधि शब्दावली के अभाव में अपेक्षित प्रगति नहीं हो पाई। सर्वप्रथम श्री परमेश्वर दयाल श्रीवास्तव ने 'श्रीवास्तव डिक्शनरी' प्रकाशित की जिसमें अंग्रेजी में प्रयुक्त पारिभाषिक विधि के शब्दों को हिन्दी में पारिभाषित किया गया। अप्रैल 1960 में राष्ट्रपति के आदेश द्वारा मानक विधि शब्दावली लागू की गई। इसके बाद 1968 में विधि मंत्रालय के अधीन स्थापित विधि साहित्य प्रकाशन खण्ड को विधि के क्षेत्र में हिन्दी भाषा के प्रयोग की अभिवृद्धि का कार्य सौंपे जाने के बाद विधि की मानक पुस्तकें बड़ी संख्या में प्रकाशित होने लगी। फलस्वरूप न्याय के क्षेत्र में हिन्दी के प्रयोग में गति आई। आज कई उच्चन्यायालयों के न्यायाधीश अपना निर्णय हिन्दी में देते हैं। अनेक राज्य सरकारों द्वारा अधिनियमों, नियमों और अध्यादेशों का अधिनियमन मूलनः हिन्दी भाषा में किया जाने लगा है जो हिन्दी के उत्तरोत्तर प्रयोग में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। प्रायः सभी न्यायिक क्षेत्रों में हिन्दी की पर्याप्त पुस्तकें व निर्णयों के हिन्दी अनुवाद आज उपलब्ध हैं। किन्तु हमें इस बात को ध्यान में

1. एम.सी.पाण्डेय : विधि के क्षेत्र हिन्दी का प्रयोग, राजभाषा भारती अंक 69रखना होगा कि

'भाषा प्रयोग से बनती है, प्रयोगशाला में उसका निर्माण नहीं होता।' दूसरे, कोई भी शब्द कठिन नहीं होता, वह 'अपरिचित' अवश्य होता है जो प्रयोग करते-करते सरल हो जाता है। आवश्यकता इस बात की है कि न्यायशास्त्र का जो साहित्य हमारे पास हिन्दी में उपलब्ध है, उनको प्रयोग में लाया जाए।[1]

विधि क्षेत्र में जिन विभूतियों का योगदान उल्लेखनीय रहा है, उनमें एक नाम आता है इलाहाबाद उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति की प्रेमशंकर गुप्त का। उन्होंने अपने जीवनकाल में लगभग चार हजार मुकदमों की सुनवाई हिन्दी में की और हिन्दी में ही अपने निर्णय लिखे। जब उच्चतम न्यायालय में उनकी पदोन्नति का समय आया तो उन्होंने उसे इस कारण अस्वीकार कर दिया क्योंकि उच्चतम न्यायालय में हिन्दी में सुनवाई और निर्णय देने की छूट नहीं है।[2] आज श्री गुप्त जैसे हिन्दी के प्रति समर्पित न्यायाधीशों की परम आवश्यकता है जो जनभाषा को न्याय की भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने में अपना योगदान दे सकें।

विधिक क्षेत्र में हिन्दी के विकास के लिए सबसे पहली आवश्यकता यह है कि हिन्दी-भाषी क्षेत्रों में एकमात्र हिन्दी ही प्रयोग की भाषा हो। आज वातावरण यह बना रखा है कि अंग्रेजी के ज्ञान के बिना काम चल ही नहीं सकता और यह इसी प्रकार चलता रहा तो हिन्दी को पनपने का अवसर प्राप्त नहीं हो सकेगा। दूसरे, यह विडंबना की स्थिति है कि जिन राज्यों में विधायन हिन्दी में होता है वहाँ भी प्रारूपण पहले अंग्रेजी में ही होता है और हिन्दी में उसका अनुवाद करके मूलपाठ की संज्ञा दे दी जाती है। इस प्रकार विधि विषयक चिन्तन एवम् कार्य अंग्रेजी में होता है और हिन्दी में उसका अनुवाद मात्र। यदि सही अर्थों में न्यायिक क्षेत्र में हिन्दी का विकास करना है तो हिन्दी के मूल भाषा के रूप में प्रयोग पर जोर दिया जाना चाहिए जिससे विधी-सम्बन्धी चिन्तन हिन्दी में हो और इस भाषा का प्रयोग स्वाभाविक रूप में हो न कि

1. रागिनी श्रीवास्तव - विधि शिक्षा में हिन्दी माध्यम की उपयुक्तता राजभाषा भारती अंक 74
2. प्रशासनिक एवं कार्यालयी हिन्दी - डॉ. रामप्रकाश एवम् डॉ. दिनेश कुमार गुप्त (राधाकृष्ण प्रकाशन) पृ. 127

अनुवाद के रूप में। इससे अंग्रेजी की आदत छूटेगी और लोग स्वभावतः हिन्दी का प्रयोग करने लगेंगे। भाषा के स्वाभाविक हो जाने पर क्लिष्टता का आक्षेप भी दूर हो जाएगा। तीसरे, हिन्दी में विधि साहित्य का अधिकाधिक सृजन हो इसके लिए एक वृहत् कार्यक्रम बनाया जाना चाहिए ताकि शीघ्र ही वह स्थिति आ जाए कि अधिवक्ता या न्यायाधीश केवल हिन्दी के ज्ञान से अपना काम चला सकें। इसके लिए सभी कानूनों के हिन्दी पाठ भी शीघ्रतम उपलब्ध कराए जाने चाहिए।[1] कानून जनता का है और उसे जनता तक पहुँचाने के लिए उसे जनता की भाषा में ही होना चाहिए। इसके लिए यह जरूरी है कि हिन्दी में विधि साहित्य उपलब्ध कराकर उन्हें विधि की शिक्षा उनकी ही भाषा में दी जाए। यदि विश्वविद्यालयों में विधि स्नातक एवम् स्नातकोत्तर शिक्षा हिन्दी में ही दी जाए तो आगे आने वाले न्यायिक अधिकारियों, अधिवक्ताओं और न्यायाधीशों को निश्चय ही हिन्दी मेंकार्य करना सुविधाजनक लगेगा। 'यदि हमने अपनी क्षमता और परिश्रम के द्वारा अंग्रेजी में अभिव्यक्ति की योग्यता प्राप्त कर ली है तो उसी क्षमता और परिश्रम से हम हिन्दी में भी अभिव्यक्ति की योग्यता प्राप्त कर सकते हैं। हमें केवल अपनी मानसिकता बदलनी है। ......और बिना भय और संकोच के अपने कार्यों में हिन्दी का प्रयोग करना है। यदि न्यायालयों में बहस और फैसले हिन्दी में होंगे तो वकील और न्यायाधीश गुणात्मक ढ़ंग से अच्छा कार्य कर सकेंगे। वादकारी भी समझ सकेंगे कि उनकी ओर से क्या कहा गया है और क्या फैसला दिया गया है'।[2] 'हमारी और हमारे देश की गरिमा सभी कार्यों में हिन्दी का प्रयोग करने में है'।[3]

शब्द भंडार की कमी और भाषा की क्लिष्टता को जिस प्रकार विधि क्षेत्र में हिन्दी के विकास में बाधक मान लिया गया है उसी प्रकार विज्ञान और प्रौद्योगिकी क्षेत्र में भी इन्हें अड़चन मानकर हिन्दी के प्रयोग से बचाने की चेष्टा की जाती रही है। किन्तु

1. डॉ. मोती बाबू : प्र.सम्पादक, उच्चतम न्यायालय निर्णय सार, राजभाषा भारती संयुक्तांक 19-20
2. श्री श्रीपति मिश्र, पूर्व मुख्यमंत्री, उत्तर प्रदेश
3. श्री धर्मसिंह, पूर्व अध्यक्ष, विधानसभा, उत्तर प्रदेश

आज जब हिन्दी में विपुल शब्द भण्डार है और नया शब्द गढ़ने की उसकी क्षमता सिद्ध है, इस प्रकार की शंकाएं निराधार हैं। विज्ञान और तकनीकी विषयों के शब्द भण्डार की कमी को वैज्ञानिक एवम् तकनीकी शब्दावली आयोग की सहायता से पूरा कर लिया गया है। जहां तक भाषा की क्लिष्टता का प्रश्न है, जिस प्रकार अंग्रेजी के कठिन शब्दों के बार-बार प्रयोग करने से वे सुग्राह्य हो जाते हैं, हिन्दी के तथाकथित कठिन शब्दों का बारम्बार प्रयोग ही उन्हें सुगम और सुग्राह्य बनाएगा।' सोलहवीं सदी में जब यूरोपीय देशों में आधुनिक विज्ञान का शुभारम्भ हुआ था तो अंग्रेजी भाषा के सामने ऐसी ही समस्या लैटिन भाषा विज्ञान की भाषा होने के कारण थी। धीरे-धीरे प्रयासों और अभ्यास के बल पर अंग्रेजी विज्ञान के लिए उपयुक्त भाषा बन गई।[1] आज हिन्दी के समक्ष भी अंग्रेजी के कारण इसी प्रकार की समस्या है। किन्तु ऐसा कोई कारण नहीं है कि हम हिन्दी को अंग्रेजी के समान विज्ञान एवम् प्रौद्योगिकी की भाषा न बना सकें। जब रूस, जर्मनी, जापान जैसे देश जिनकी भाषा अंग्रेजी नहीं, अगर वे केवल प्रगति के ही नहीं बल्कि विज्ञान और तकनीकी क्षेत्र में चोटी के देश माने जाते हैं तो हम क्यों नहीं हिन्दी माध्यम से प्रगति कर सकते ? इसके लिए हमें अपने विज्ञान और तकनीकी साहित्य का हिन्दी में सृजन करना होगा तथा सात ही विदेशी साहित्य का अनुवाद करना होगा। विज्ञान और तकनीकी विषयों में आज भी 80-85 प्रतिशत साहित्य हमें अंग्रेजी भाषा में ही मिलता है और तकनीकी शिक्षा देने वाले महाविद्यालयों में शिक्षण भी इसी माध्यम द्वारा होता है। तकनीकी शिक्षण संस्थानों का प्रबुद्ध वर्ग ही तकनीकी विषयों पर पुस्तकें लिखता है और इस वर्ग के अधिकांश व्यक्तियों की मान्यता हो गई है कि विज्ञान तथा तकनीकी जैसे विषयों को हिन्दी माध्यम से पढ़ना-पढ़ाना एक दुष्कर कार्य है।[2] इस मान्यता को बदलने के लिए हमें विज्ञान व तकनीकी क्षेत्र में हिन्दी में लिखे और अनूदित किए जाने वाले साहित्य में क्लिष्ट और दुर्बोध हिन्दी के

1. विज्ञान तथा तकनीकी क्षेत्र में हिन्दी के प्रयोग की सम्भावनाएं-ऋषभदेव सिंह, राजभाषा भारती अंक 32
2. तकनीकी ज्ञान का माध्यम हिन्दी - प्रो. जे.एल.बंसल, विभागाध्यक्ष, गणित विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय (लघु उद्योग सेवा संस्थान, जयपुर द्वारा आयोजित संगोष्ठी से।

स्थान पर सरल और सुबोध हिन्दी का प्रयोग करना होगा। हमें आवश्यकतानुसार अंग्रेजी शब्दों को भी ग्रहण करना होगा खासकर उन शब्दों को जो आम लोगों में प्रचलित हो चुके हैं। अभियांत्रिकी के स्थान पर इंजीनियरिंग और अभियंता के स्थान पर इंजीनियर का प्रयोग करने पर कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। हिन्दी को समुद्र के समान बनना होगा जिसमें अनेक नदियां आकर मिलती हैं और उसमें आत्मसात हो जाती हैं।

सरकारी स्तर पर और विश्वविद्यालय स्तर पर भी यह प्रयास किया जाना चाहिए कि अधिक से अधिक विज्ञान और तकनीकी साहित्य का सरल हिन्दी में अनुवाद हो। इसके अलावा तकनीकी विशेषज्ञों व वैज्ञानिकों को भी हिन्दी में साहित्य सृजन के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। भारत सरकार के विभिन्न मंत्रालयों द्वारा तकनीकी विषयों पर शोध ग्रंथ अथवा मौलिक पुस्तक लिखने पर प्रति वर्ष विशेष पुरस्कार प्रदान किए जाते हैं। यह आवश्यक भी है क्योंकि जितना अधिक मौलिक साहित्य तकनीकी क्षेत्र में लिखा जाएगा उतना ही हिन्दी में तकनीकी साहित्य समृद्ध हो पाएगा। उपयुक्त पुस्तकों और शोध पत्रिकाओं के हिन्दी भाषा में उपलब्ध होने पर उन आलोचकों को भी उत्तर मिल जाएगा जो इस प्रकार के साहित्य की हिन्दी भाषा में कमी और अनुपलब्धि के आधार पर हिन्दी के शिक्षण माध्यम होने का विरोध करते रहे हैं। तकनीकी क्षेत्र में हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने के लिए आवश्यक है कि 'जिस स्तर पर व्यावसायिक अध्ययन प्रारम्भ किया जाता है, वहीं से हिन्दी के प्रयोग पर बल दिया जाए। धीरे-धीरे उच्चतर शिक्षा में भी हिन्दी का समावेश किया जाए। स्कूल व कॉलेज स्तर पर भौतिकी, रसायन व जीव विज्ञान की पढ़ाई में हिन्दी माध्यम को काफी पहले शुरु किया जा चुका है, अब औद्योगिक व तकनीकी शिक्षा में भी यह आरम्भ किया जा सकता है।'[1]

1. उद्योग व तकनीकी क्षेत्र में हिन्दी भाषा का सरलीकरण और एकरूपता - शमीम अख्तर, राजस्थान प्रशा. सेवा, जयपुर (लघु उद्योग सेवा संस्थान, जयपुर में संगोष्ठी में दिए आख्यान से)

विज्ञान और प्रौद्योगिकी क्षेत्र में कम्प्यूटर के प्रवेश के पश्चात् सूचना प्रौद्योगिकी में जबरदस्त क्रांति आई है। 'कम्प्यूटर का विकास प्रमुखतः अंग्रेजी माध्यम में होने से इसकी कार्यप्रणाली समझने में बहुतों को आज भी बड़ी कठिनाई होती है। किन्तु कम्प्यूटर के लिए दुनिया की सभी भाषाएं समान महत्व की हैं। इसलिए कम्प्यूटर के बुनियादी सिद्धान्तों को किसी भी भाषा में समझा जा सकता है।[1] देवनागरी लिपि एक वैज्ञानिक लिपि है। इस लिपि में कम्प्यूटर से काम करना कठिन नहीं है। 1971-72 में आई.आई.टी. कानपुर ने एक बहुत सरल कुंजी फलक और उसकी प्रणाली तैयार की जिसे सभी भारतीय भाषाओं के लिए प्रयुक्त किया जा सकता था। तभी से कम्प्यूटर पर हिन्दी कार्य करने की प्रणाली विकसित करने की दिशा में सरकारी और गैर सरकारी स्तर पर प्रयास किए जा रहे हैं। राजभाषा विभाग और इलेक्ट्रोनिकी विभाग के निरंतर प्रयासों के फलस्वरूप सरकारी कार्यालयों, उपक्रमों, बैंकों आदि में कम्प्यूटरों पर अब हिन्दी या द्विभाषिक रूप में काम करने की सुविधा उपलब्ध हो गई है। वर्तमान कम्प्यूटरों में 'जिस्ट' तकनीक का इस्तेमाल करके देवनागरी की सुविधा उपलब्ध कराई जा रही है। आज कम्प्यूटरों पर शब्द संसाधन और डाटा संसाधन कार्य हिन्दी में किए जा रहे हैं। कम्प्यूटरों में अधिकाधिक कार्य हिन्दी में लिए जा सकें इसके लिए राष्ट्रीय सूचना केन्द्र और राजभाषा विभाग के तकनीकी कक्ष द्वारा अधिकारियों व कर्मचारियों को हिन्दी में कम्प्यूटर प्रशिक्षण दिया जा रहा है। नवीनतम प्रयासों में 'सी' डेक द्वारा 'मंत्रा' नामक सॉफ्टवेयर तैयार किया जाना है जिसके फलस्वरूप प्रशासनिक कार्यों में अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद उपलब्ध हो सकेगा।

इस प्रकार विभिन्न क्षेत्रों में हिन्दी के प्रचार-प्रसार की दिशा में उल्लेखनीय प्रयास किए जा रहे हैं। इन प्रयासों का उल्लेख हमने पिछले पृष्ठों में विस्तार से किया है। हम इक्कीसवीं सदी में प्रवेश करने जा रहे हैं और भविष्य के प्रति हम आशावान् हैं। हम मानकर चलते हैं कि आने वाली सहस्त्राबदी में हिन्दी अपनी मंजिल अवश्य तय कर

---

1. कम्प्यूटर और हिन्दी - डॉ. हरिमोहन - तक्षशिला प्रकाशन पृ. 7

लेगी। किन्तु तब तक हिन्दी को राजभाषा और राष्ट्रभाषा के रूप में पूर्णतः स्थापित करने के प्रयास हमें सतत् रूप से जारी रखने होंगे। हमारी हृदय से कामना है कि 'भारतीय भाषाओं के हार की मध्यमणि हिन्दी भारत-भारती होकर विराजती रहे।' (रविन्द्रनाथ टैगोर)

------ इति ------